॥ॐ॥

॥ॐ श्री परमात्मने नमः ॥

॥श्री गणेशाय नमः॥

श्री कृष्ण चरित्र रहस्य

विषय-सूची

॥श्री कृष्ण चरित्र रहस्य निवेदन॥ - 3

॥ श्रीकृष्ण अवतरण रहस्य॥ 7

॥ गोप, गोपी यादवगण रहस्य॥ 12

॥ रासलीला रहस्य॥ 15

॥ माखन लीला रहस्य॥ 21

॥ असत्य भाषण रहस्य॥ 24

॥ चीरहरण लीला रहस्य॥ 27

॥ बहुविवाह रहस्य॥ 30

॥ विभिन्न श्री कृष्ण रहस्य॥ 32

॥श्री कृष्ण चरित्र रहस्य - निवेदन॥

भगवान् श्री कृष्ण कृष्ण का जन्म भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी तिथि को रोहिणी नक्षत्र में हुआ था। प्राय: प्रत्येक वर्ष यह देखा गया है की श्री कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व निकट आते ही श्री कृष्ण निंदा के नए नए साधनों का आविष्कार किया जाता है जिनमे सोशल पोस्ट, चित्र तथा वीडियो, whatsapp मेसेज इत्यादि शामिल हैं। श्री कृष्ण तथा श्री कृष्ण लीला को अधर्मी, अनैतिक, चरित्रहीन, दुराचारी तथा दुश्चरित्र तक कहने में संकोच नहीं किया जाता। आप सभी से हाथ जोड़ कर प्रार्थना है की पहला इस प्रकार के सभी सोशल पोस्ट, चित्र तथा वीडियो, whatsapp मेसेज इत्यादि को बिना देखे बिना समझे आगे ना बढ़ाएं और भेजने वाले व्यक्ति को भी समझने का प्रयास करें तथा दूसरा इन सभी का भरपूर खंडन करें ताकि इस प्रकार के सभी प्रयासों पर रोक लगाई जा सके। हमारा मानना है यह सभी तथा हिन्दू धर्म निंदा सम्बन्धी अन्य अनेकों उपाय एक सोची समझी विचारधारा - हिन्दू धर्म को कोसने (hindu bashing) की उपज है जिससे साधारण सनातन धर्मी अज्ञानता में जी कर अपने धर्म को धिक्कारे तथा अन्य धर्मों की शरण ले।

सर्वव्यापी निराकार परमात्मा का किसी स्थूल लौकिक रूप धारण करके संसार में प्रकट होना एक अपूर्व वस्तु है, इसलिये अवतार के विषय अनेक प्रकार को चिन्ताएँ तथा अनेक प्रकारको शङ्काएँ हुआ करती है। इच्छारहित सर्वशक्तिमान भगवान् को संसार मे प्रकट होकर सांसारिक लीला करने की क्या आवश्यकता है ? निराकार परमात्मा मायामय स्थूल शरीर कैसे ग्रहण कर सकते है ? इत्यादि।

परमात्माके सर्वव्यापक होने से उनकी शक्ति भी सर्वव्यापिनी है । सर्वव्यापक परमात्मा की किसी विशेष केन्द्र द्वारा शक्ति प्रकट होने को ही अवतार कहते हैं । इसमे अवतार शब्द द्वारा जो अवतरण अर्थात् नीचे उतर आने का भाव प्रकट होता है, उसका तात्पर्य केवल भावमूलक है । अवतारों के अनेक रूपों के विषय में शास्त्रों में अनेको प्रमाण उपलब्ध है। ऋग्वेद मं० ६, अ० ४, सू० ४७ में कहा गया है:

रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय ।
इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यास्य हरयः शता दश ॥

भक्तों की प्रार्थनानुसार प्रख्यात होने के लिये श्री भगवान् माया के सयोग से जीव, अवतार आदि अनेक रूप धारण करते हैं, उनके शत शत रूप हैं।

लोकपालक भगवान् देव, तिर्यक् मनुष्यादि शरीर के आधार से लीलावतार धारण करके सत्वगुण के द्वारा ही संसार की रक्षा करते हैं। इस प्रकार के अवतार कितने होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तरमें श्रीमद्भागवत्के प्रथम स्कन्ध, तृतीय अध्याय में कहा है :

अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सवनिधेद्विजाः।
यथा विदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ।।
ऋषयो मनवो देवा मनुपुत्रा महौजसः।
कलाः सर्वे हरेरेव सप्रजापतयः स्मृताः ।।
एते चांशफलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।

इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगे युगे ।।

जिस प्रकार अगाध जल से युक्त सरोवर से सहस्र सहस्र जल की धाराएं निकलती है, उसी प्रकार सत्त्वगुणाश्रय भगवान से भी अनन्त अवतारों की उत्पत्ति होती है। ऋषिगण, मनुगण, देवगण, महातेजा मलुपुत्रगण, प्रजापतिगण इन सभी में भागवत कला का विभूति रूप से विशेष विकास है । अन्यान्य अवतारो में भगवान् की आंशिक शक्तियों का विकास है, परन्तु श्रीकृष्ण में पूर्ण भगवत् शक्ति का विकास होने से श्रीकृष्ण स्वयं भगवद् रूप हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण के पूर्णावतार होनेके कारण उनके जीवन में कर्म, ज्ञान, भक्ति सभी के उच्च अलौकिक आदर्श प्रकट हुए थे। पूर्णावतार भावातीत होने के कारण किसी एक भाव को लेकर काम नहीं करते । वे केवल जगत् कल्याण और समष्टि रुप से धर्मरक्षा का विचार रख कर काम करते हैं। इसी कारण युधिष्ठिर से मिथ्या कहलाकर द्रोण का वध करवा देने पर भी श्रीकृष्ण को पाप नहीं लगा। श्री कृष्ण ने अन्य भी ऐसे अनेकों कार्य करवाए जो लौकिक दृष्टि उत्तम न समझे जाने पर भी जगत कल्याण तथा जगत में धर्म रक्षा के विचार से अतिउत्तम थे । यही पूर्णावतार के जीवन में कर्म का रहस्य है। पूर्णावतार होने के कारण वह सभी रसों से भी परिपूर्ण हैं, इसी कारण श्रीकृष्ण लीला में पांडव आदि सख्य भाव के भक्त, विदुर आदि दास्य भाव के भक्त, माता यशोदा आदि वात्सल्य रस के भक्त, भीष्म आदि वीर रस के भक्त, राधा और ब्रजगोपियां आदि प्रेम और श्रृंगार रस के भक्त, प्रकट हुए थे।

इनमे से दास्य, वात्सल्य तथा प्रेम और श्रृंगार रस कुछ रहस्यमय होने के कारण माखन भोग, रासलीला, बहुविवाह आदि के रहस्य को न समझकर मूढ़ लोग श्रीकृष्ण के महान चरित्रपर कलङ्क लगाने का प्रयास करते हैं।

समाज में व्याप्त कुविचारों तथा भ्रांतियों से प्रभावित होकर हम इन रहस्यों के समाधान का प्रयास किया है आप से निवेदन है की हमारे इस प्रयास में हमारा सहयोग दें।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।

॥ श्रीकृष्ण अवतरण रहस्य॥

श्री भगवान् का श्रीकृष्ण रूप में अवतरण क्यों हुआ?

श्री भगवान् के प्रकट होने के कारण के विषय में अग्निपुराण में लिखा है :

यदोः कुले यादवाश्च वासुदेवस्तदुत्तमः।
भुवो भारावतारार्थ देवक्यां वसुदेवतः ।।

यदुवंश में जो यादवगण उत्पन्न हुए थे, उनमे से वासुदेव श्रीकृष्ण प्रधान थे । वसुदेव और देवकी के द्वारा पथिवी के भारहरण के लिये ही उनका अवतरण हुआ था।

श्रीकृष्ण के अवतार लेने से पहले पृथिवी असुरभार से पीडित थी और गौ का रूप धारण करके उन्होंने ब्रह्माजीकी शरण ली थी और ब्रह्मा आदि देवताओं ने भी श्रीभगवान् विष्णु की शरण ली थी। उस समय एक और कंस, जरासन्ध आदि प्रबल असुरों के अत्याचार से संसार अत्यन्त पीड़ित हो रहा था, संसार से भगवान् नाम का लोप हो रहा था, धर्म का नाश हो रहा था तथा दूसरी और शिशुपाल और दन्तवक्र नामक असुरों के अत्याचार तथा राजाओं के पापाचरण से राजा और प्रजा दोनों ही में भयंकर रूप से पाप की वृद्धि हो रही थी। इसके सिवाय अघासुर, बकासुर, धेनुकासुर, गर्दभार, अरिष्ट, वृषभ, केशी, प्रलम्ब, चाणूर, तृणावर्त्त, मुष्टिक, नरकासुर, पञ्चजन, कालयवन, शम्बर, बाणासुर आदि कितने ही असुर उस समय उत्पन्न हो गये थे, जिनके

पापाचरण और अत्याचारसे पृथिवी बहुत ही दुःखिता हो गई थी और संसारमें धर्म का लोप हो गया था।

अतः इन सब असुरों के पाप से बढे बोझ से पृथिवी को बचाने लिये और पाप का विनाश कर समय के योग्य धर्म की धारा को पुन: प्रवाहित करने के लिये पूर्णकला में श्रीकृष्ण का अवतार हुआ था । उस समय समाज में धर्म की व्यवस्था कितनी गिर गईं थीं, वह इसी से समझा जा सकता है कि नवजात बालक को मारने में, अपनी सहोदरा बहन और बहनोई को अन्याय रूप से कैद करके लगातार उनकी सन्तान को जन्म लेते ही मार देने में और अपने पिता उग्रसेन को भी कैद करने में दुरात्मा कंस को कोई भी संकोच नही था । आज का समाज इतना गिर गया है तब भी अपनी रजस्वला एकवस्त्र भाभी को भरी सभा के बीच में नग्न करने की पाप इच्छा को आज के समाज में भी स्वीकार किया नहीं जा सकता। परन्तु जहाँ पर रजस्वला द्रौपदी के भरी सभा के बीच नग्न करने की इच्छा से उसके वस्त्र खींचे जाएँ और भीष्म पितामह जैसे धर्मज्ञ महात्मा भी उसको देखते रहें और धर्म - अधर्म के विचार से प्रभावित होकर एक शब्द भी उनसे न कहा जाय, वहाँ समाज की दशा किंतनी शोचनीय हो गई थी इसको विचारवान् मनुष्य स्वयं ही समझ सकते हैं।

जिस समाज में बालब्रह्मचारी भीष्म पितामह की बुद्धि पर भी अज्ञान का अन्धकार घिर जाय और द्रोण आदि सात रथी एकाकी अस्त्र शस्त्र से रहित असहाय अभिमन्यु को कायर की तरह मारकर भी अपनी वीरता समझें, उस समाज में धर्म का कितना विनाश हो गया था इसका सभी अनुमान लगा सकते हैं। गुरु सबके पूज्य होते हैं, शिष्य पर उनकी ममत्व होता है, परन्तु जहाँ पर गुरु शिष्य का तथा शिष्य के पुत्र का प्राणविनाश करें और गुरुपुत्र अश्वत्थामा सोते हुए शिष्य पुत्रों का प्राण विनाश करनेमें

संकोच न करें, वहाँ पर कितना पाप बढ़ गया था, इसको समझाने की आवश्यकता नहीं है। शास्त्रों के अनुसार बालक की हत्या सबसे बड़ा पाप है और निद्रित अवस्था में मनुष्य क्या, वृक्ष की डाल काटना भी पाप माना जाता है, परन्तु द्रोण के पुत्र अश्वत्थामा ने निद्रित अवस्था में ही द्रौपदीके पांच बालकों का वध कर दिया था और गर्भ में ही परीक्षित को मार डालने के लिये उत्तरा के गर्भ में अस्त्र का प्रयोग किया था । ऐसे ऐसे भयंकर पाप द्वापर ओर कलि के सन्धिकाल में फैल गये थे।

अपने पिता की सम्पत्ति का आधा भाग प्राप्त करने का अधिकार पाण्डु को अवश्य था इसलिये धर्मानुसार युधिष्ठिर को भी राज्य का अधिकार था । परन्तु राज्य देना तो दूर रहा, पांडवों का अपना कमाया हुआ राज्य भी जुए में छीन हरा कर वर्षों तक कौरवों के पांडवों जंगल में घुमाया। बारह वर्ष के कठोर वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास के अनन्तर जब पांडवों ने आधी संपत्ति की मांग की तो दुष्ट दुर्योधन ने उसे अस्वीकार कर दिया। फिर भी जब केवल पांच ग्राम भगवान श्रीकृष्ण ने पांडवों के लिये मांगे तब भी दुर्योधन ने अस्वीकार कर दिया और कहा :

सूच्यग्रेण सुतीक्ष्णेन भिद्यते या च मेदिनी ।
तदर्द्ध नैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव ।।

एक सूई के आगे जितनी भूमि आती है उसका भी आधा भाग युद्ध किये बिना नहीं मिलेगा और केवल इतना ही नहीं, पापाचारी दुर्योधन ने, जिनके चरणकमलके आश्रय से जीव संसार के बन्धन से मुक्त होता है, उन्ही भगवन श्रीकृष्ण को बाँधने की आज्ञा दी। इन्हीं पापियों का नाश करके पृथ्वी का पापभार दूर करके धर्म की वृद्धि के लिये ही पूर्णकला में श्री भगवान् का अवतार हुआ था ।

अन्य भगवान् अवतार जिस काल में प्रकट हुए थे उस समय केवल एक कला के आधार पर विश्व में व्याप्त विघ्नों को दूर करने में समर्थ हुए थे। परन्तु द्वापर युग का अन्त का समय इतना भयानक हो गया था कि, उस समय श्रीबलराम अवतार के कलारूप से प्रकट होने पर भी कार्य पूरा न होता हुआ देखकर श्रीभगवान् सोलह कला से युक्त श्रीकृष्ण पूर्णावतार के रूप में प्रकट हुए। श्रीमद भागवत के दशम स्कन्ध में कहा गया है:

देवक्या देवरूपिण्यां विष्णुः सर्वगुहाशयः ।

अविरासीद्यथा प्राच्या दिशीन्दुरिव पुष्कलः ।।

तमद्भुतं बालकमम्बुजेक्षण चतुर्भुज शखगदायुदायुधम् ।

श्रीवत्सलक्ष्मै गलशोभिकौस्तुभं पीताम्बरं सान्दुपयोदसौभगम् ॥

महाहवैदूर्यकिरीटकुण्डलत्विषा परिष्वक्तसहसकुन्तलम् ।

उद्दामकाञ्यङ्गदकङ्कणादिभिविरोचमानं वसुदेव ऐक्षत ।।

भादौ मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी तिथि को आधी रातके समय जिसमें सब जीवों का निवास है ऐसे श्री विष्णु जिस प्रकार पूर्व दिशामें चन्द्रमा का उदय होता है उसी प्रकार देवीरूपिणी देवकी के गर्भ से प्रकट हो गये । कमललोचन, चतुर्भुज, शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी, श्रीवत्स चिह्न से युक्त, कण्ठ में कौस्तुभ भूषित, पीताम्बर, मेघवणे, वैदूर्य मणि से सुशोभित, किरीट कुण्डल की ज्योति से प्रकाशमान, घुंघराले केश धारण किये हुए, करधनी, बिजावट और वलय आदि गहनों से परम शोभायमान उस अद्भुत बालक भगवन को वसुदेव जी ने देखा और देखकर स्तोत्र पाठ किया । तदनन्तर माता देवकी

ने भी श्रीभगवान् की स्तुति की वसुदेव देवकी के स्तुति पाठ के अनन्तर श्री भगवन ने उन दोनों को पूर्वजन्म का स्मरण कराया कि किस प्रकारसे उन दोनों ने पूर्वजन्म में घोर तपस्या की और श्री भगवान् के प्रसन्न हो जाने पर उन दोनों ने यही वर मांगा था कि, श्री भगवान् जैसे पुत्र उनको प्राप्त हो जाय । उनके जैसे तो केवल वह एक ही हैं, ऐसा सोचकर उन्होंने कृष्णावतार में वसुदेव और देवकी के पुत्ररूप में उत्पन्न होना स्वीकार किया था । उसी बात का उन्होनें वसुदेव देवकी को स्मरण दिलाया और कहा:

एतद्वां दर्शितं रूपं प्राग्जन्मस्मरणाय में ।

नान्यथा मद्भवं ज्ञानं मर्त्यलिङ्गेन न जायते ।।

युव मा पुत्रभावेन ब्रह्मभावेन चासकृत् ।

चिन्तयन्तो कृतस्नेहौ यास्येथे मद्गतिं पराम् ।।

पूर्वजन्म के स्मरण के लिये मैंने यह अपना स्वरूप बताया, क्योंकि, ऐसा किये बिना लौकिक जीव मुझे पहचान नहीं सकता । आप दोनों मुझे पुत्रभाव और ब्रह्मभाव दोनों भाव से स्मरण तथा मुझसे प्रेम करके उत्तम ब्रह्मगति को प्राप्त कर सकेंगे ।

इतना कहकर श्री भगववान ने निजरूप को छिपाकर लौकिक शिशु का रूप धारण किया ।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।

॥ गोप, गोपी यादवगण रहस्य॥

गोप, गोपी, गोपालकगण, यादवगण, श्री बलराम आदि कौन थे? क्या श्री राधिका स्वम महामाया का रूप थीं ?

श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध अध्याय १ में कहा गया है:

गिरं समाधौ गगने समीरितां निशम्य वेधास्त्रिदशानुवाच ह ।

गां पौरुषीं मे श्रृणुतामराः पुनः विधीयतां आशु तथैव मा चिरम् ॥ २१ ॥

पुरैव पुंसा अवधृतो धराज्वरो भवद्भिः अंशैः यदुषूपजन्यताम् ।

स यावद् उर्व्या भरं इश्वरेश्वरः स्वकालशक्त्या क्षपयन् चरेद् भुवि ॥ २२ ॥

वसुदेवगृहे साक्षाद् भगवान् पुरुषः परः ।

जनिष्यते तत्प्रियार्थं संभवन्तु सुरस्त्रियः ॥ २३ ॥

वासुदेवकलानन्तः सहस्रवदनः स्वराट् ।

अग्रतो भविता देवो हरेः प्रियचिकीर्षया ॥ २४ ॥

विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितं जगत् ।

आदिष्टा प्रभुणांशेन कार्यार्थे संभविष्यति ॥ २५ ॥

आकाशवाणी सुनकर ब्रह्माजीने देवताओंको कहा - "हे देवतागण ! मेरी बात सुनो और शीघ्र उस पर आचरण चरण करो । श्री भगवान् ने पृथिवी की पीड़ा जान ली है और पृथिवी का भार उतारने के लिये वह अवतीर्ण होगे । आप सभी भी मनुष्य रूप ले कर

पृथिवी में उनकी सहायता के लिये उत्पन्न हो जाओ और जब तक वह पृथिवी में रहें तब तक उनके अवतारकार्य में सहायता करो । वसुदेव के गृह में साक्षात् भगवान् का अभिर्भाव होने वाला है इसलिये उनके प्रिय कार्यों को संपन्न करने के लिये सुरपुरी की देवियां उत्पन्न हो जायं । वासुदेव के अंशसे उत्पन्न अनन्तदेव भी बलराम रूप से उनके कार्य में सहायता देने के लिये पहले ही उत्पन्न हो गए हैं। महामाया भी उनकी आज्ञा से उनके ही कार्य के लिये संसार में उत्पन्न होंगी ।

जिस प्रकार श्री भगवान् रामचन्द्र की अवतार लीला को पूर्ण करने के लिये अनेक देवता वानर आदि के रूप में उत्पन्न हुए थे और माता लक्ष्मी भी सीता रूप में उत्पन्न हुईं थी, उसी प्रकार श्री भगवान् कृष्ण की कर्मोपासना ज्ञानमयी पूर्ण अवतार की लीला को कर्म, उपासना और ज्ञान इन तीनों से परिपूर्ण करनेके लिये कृष्णावतार के समय भी अनेक देवता, देवियां, श्रुतियां और ऋषि महर्षिगण भी विविध स्त्री परुष के रूप में उत्पन्न हुए थे और स्वयं प्रकृति माता भी राधा रूप में गोकुल में उत्पन्न हो गई थीं।

अतः श्री कृष्णावतार के समय उनकी अवतारलीला को पूर्ण करने के लिये ही अनन्तदेव, अन्यान्य देवतांगण, देवीगण और स्वयं महामाया का नर नारी रूप में आविर्भाव हुआ था । ये ही सब अनेक गोप, गोपी, गोपालकगण, यादवगण, श्री बलराम और श्री राधिका के नाम से प्रसिद्ध हुए। महामाया की उत्पत्ति के विषय में शास्त्र में कहा गया है कि, कृष्णजन्म के समय यशोदा के गर्भ से महामाया उत्पन्न हुई थीं और कंस के हाथ से पृथक् होकर उसको कृष्ण जन्म का वृत्तान्त सुनाकर चली गई थी । श्री राधा में महामाया का विशेष अंश था इसका प्रमाण शास्त्रों में मिलता है। पद्मपुराण के पाताल काण्ड में लिखा है:

द्योतमाना दिशः सर्वाः कुर्वती विद्युदुज्ज्वलाः।

प्रधानं या भगवती यया सर्वमिदं ततम् ।।१४।।

सृष्टिस्थित्यंतरूपा या विद्या विद्यात्रयीपरा ।

स्वरूपा शक्तिरुपा च मायारूपा च चिन्मयी ।।१५।।

ब्रह्मविष्णुशिवादीनां देहकारणकारणम् ।

चराचरं जगत्सर्वं यन्मायापरिरंभितम् ।।१६।।

वृंदावनेश्वरी नाम्ना राधा धात्रानुकारणात् ।

तामालिंग्य वसंतं तं मुदा वृंदावनेश्वरम् ।।१७।।

अन्योन्यचुंबनाश्लेष मदावेशविघूर्णितम् ।

ध्यायेदेवं कृष्णदेवं स च सिद्धिमवाप्नुयात् ।।१८।।

जिनके अपूर्व तेज से बिजली के प्रकाश की तरह दशो दिशायें प्रकाशित हो रही हैं, जो प्रधानरूपिणी भगवती सर्वत्र व्याप्त है, जो सृष्टिस्थिति और प्रलय करने वाली और विद्या तथा अविद्यारूपिणी अपने रूप में, शक्तिरूप में, मायारूप में एवं चिन्मयभाव में सुशोभित होती हैं, जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवताओं के कारण की भी कारण हैं, जिनकी माया से चर और अचर समस्त संसार परिव्याप्त है, वे ही, वृन्दावन की ईश्वरी राधा हैं और परमात्मा रूप वृन्दावन के ईश्वर श्रीकृष्ण आनन्द से उनको आलिङ्गन कर रहे है। इस प्रकार राधा से आलिंगित श्री कृष्ण का जो भक्त ध्यान करता है उसे मुक्तिपद प्राप्त होता है । यही श्री राधा में महामाया का अंश था इसका प्रमाण है।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवायः।।

॥ रासलीला रहस्य॥

रासलीला तथा उससे जुडी भ्रांतियां

रास शब्द का मूल 'रस' है और रास स्वयं भगवान् श्री कृष्ण ही हैं - रासो वै स:। अत: जिस दिव्य क्रीड़ा में एक ही रस अनेक रसों के रूप में होकर अनंत रसों का समास्वादन करे वही रास हैं। जिन मनुष्यों ने श्रीमद भगवत महापुराण दशम स्कन्द का अध्यन्न किया है वह यह बात सरलता से समझ सकते हैं की रासलीला के पांच अध्यायों में वंशी ध्वनि, गोपियीं के अभिसार, श्रीकृष्ण के साथ उनकी बातचीत, रमण, राधाजी के साथ अंतर्ध्यान, पुन: प्राकट्य, गोपियों के द्वारा दिए गए वासनासन पर विराजना, गोपियों के कूट प्रश्नो का उत्तर, रासनृत्य, क्रीड़ा, जलकेलि और वनविहार का वर्णन है जिनको पढ़ कर सात्विकभाव के वस्तुतः सभी रसों (स्तंभ, स्वेद, रोमांच, स्वर – भंग, कम्प, विवर्णता, अश्रु, प्रलयका) का आस्वादन किया जा सकता है।

समय के साथ ही मानवी विचारधारा बदलती रहती है। वर्त्तमान समय में भगवान् की दिव्य लीलाओं की तो बात ही क्या, भगवान् के अस्तित्व पर भी प्रश्नचिन्ह लगाने वाले व्यक्ति करोड़ों में हैं। ऐसी स्थिति में इस दिव्य लीला का रहस्य न समझकर लोग अनेकों प्रकार की आशंका प्रकट करें इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। जो लोग भगवान् श्री कृष्ण को केवल मनुष्य मानते है, या केवल कल्पना मात्र समझते हैं और केवल मानवीय भाव अवं आदर्शों की कसौटी पर ही उनके चरित्र को परखना चाहते हैं, वह पहले ही भगवान् से विमुख हो जाते हैं। उनके चित्त में धर्म की कोई भावना नहीं रहती और वे भगवान् को भी अपनी ही बुद्धि तथा विचारों के पीछे चलाना चाहते हैं। इनमे

वह मूढ़ भी शामिल हैं जो श्री कृष्ण की लीलाओं का अनुकरण करने की व्यर्थ चेष्टा करते हैं।

जो व्यक्ति श्रीकृष्ण भगवान् है यह नहीं मानता वह उनकी लीलाओं और धर्म शास्त्रों की वाणी की किस प्रकार आलोचना करता हैं यह समझ नहीं आता? यदि आप किसी पर विश्वास ही नहीं करते तो उसकी आलोचना का आधार आप स्वयं ही खो देते हैं क्योंकि आपके के अनुसार उसका अस्तित्व ही नहीं है। दूसरा जैसे मानव धर्म और पशुधर्म अलग अलग होते हैं उसी प्रकार भगवद्धर्म भी अलग होता है। जिस प्रकार मानव को पशु धर्म की कसौटी पर नहीं तोला जा सकता उसी प्रकार भगवान् को मानव धर्म की कसौटी पर तोलने का कोई औचित्य नहीं हैं। परन्तु यदि मानव धर्म और आदर्शों कसौटी से भी रासलीला को देखा जाये। तब भी इसमें आपत्ति की कोई बात नहीं है। यह बात सिद्ध है की रासलील के समय श्री कृष्ण की आयु १० वर्ष के लगभग थी। मानवीय आधार पर भी १० वर्ष के लड़के लड़की एक साथ खेलते हैं, गुड़ियों की शादी रचाते हैं, बारात ले जाते हैं, दूर तक घूमने जाते हैं तथा आपस में भोज भी करते हैं। इसमें किसी प्रकार का दुर्भाव तथा कामवृत्ति नहीं देखि जाती तब रासलीला पर प्रश्नचिन्ह लगाना कहाँ तक उचित है।

अज्ञानता के कारण भी शंका आना स्वाभाविक है अत: रासलीला के रहस्य को समझने ले लिए यह भी समझना आवश्यक है की वह गोपियाँ वस्तुतः कौन थीं, जिनके साथ श्री भगवान् ने रास रचाया?

गोपियोंके पूर्वजन्मके विषय में शास्त्रों में अनेक प्रमाण मिलते हैं। श्रीमद्भागवत के प्रमाण से हम पहले ही कह चुके हैं की बहुत से गोपियां पूर्वजन्म की देवियां थी जिन्होंने

ब्रह्माजी के कथनानुसार पूर्णावतार की लीला में सहायता करने के लिये गोपीरूप में जन्मग्रहण किया था। इसके अलावा और भी अनेक प्रमाण मिलते हैं जिससे सिद्ध होता है कि, बहुत गोपियां पूर्वजन्मकी श्रुतियाँ थीं और बहुत पूर्वजन्म मे ऋषि महर्षि थीं । अनेक गोपियों के पूर्वजन्म मे महर्षि होने के विषयमे कृष्णोपनिषद्म में लिखा है :

श्रीमहाविष्णु सचिदानन्दलक्षणं रामचन्द्रं दृष्ट्वा सर्वाङ्गसुन्दर सुनयों धनवासिनो विस्मिता बभूवुः ।

ते होचुनश्चयमवतारान्वै गण्यन्ते आलिङ्गामो भवन्तमिति ।

भवान्तरे कृष्णावतारे युयै गोपिका भुत्वा मामालिङ्गथ ।।

सर्वाङ्ग सुन्दर सच्चिदानन्द लक्षण श्रीरामचन्द्र को देखकर वनवासी मुनिगण विस्मित हो गये और उन्होंने उनके साथ आलिंगन करने की इच्छा प्रकट की । श्रीभगवान् रामचन्द्रजी ने मुनियों से कहा कि उनका रामावतार मर्यादा मूलक है इसलिये इस अवतार में आलिंगन नहीं हो सकता। आगे जब वह कृष्णावतार धारण कर पृथिवी में आएंगे, उस समय मुनिगण गोपीरूप से ब्रज में उत्पन्न होंगे और उसी समय श्री भगवान् के साथ उनका आलिंगन हो सकेगा । ये ही वनवासी अनेक मुनि, ऋषि, कृष्णावतार के समय गोपिका बनकर ब्रज में उत्पन्न हुए थे जिनको श्री कृष्ण के सानिध्य का सौभाग्य मिला ।

गोपियों के पूर्वजन्म के विषय मे पद्मपुराण के पातालखण्ड- अध्याय ७१ में अपूर्व वर्णन मिलता है। उसमें हरपार्वती संवाद प्रसङ्ग में शिवजी पार्वती से कह रहे हैं:

मानसे सरसि स्थित्वा तपस्तीव्रमुपेयुषाम्।

जपतां सिद्धमंत्रांश्च ध्यायतां हरिमीश्वरम् ।।१०१।।

मुनीनां कांक्षतां नित्यं तस्या एव पदांबुजम् ।

एकसप्ततिसाहस्रं संख्यातानां महौजसाम् ।।१०२।।

तत्तेऽहं कथयाम्यद्य तद्रहस्यं परं वने ।।१०३।।

मानस-सरोवर में श्री भगवान के चरणारविन्द सेवा की आकांक्षा से इकहत्तर हजार मुनियों ने तीव्र तपस्या की थी। उन्होंने सिद्ध मंत्र का जप और हरि का निरन्तर ध्यान किया था। उनमे से जिन मुनियों ने श्रीभगवान को शरीर, मन, प्राण, आत्मा सभी के द्वारा प्राप्त करने की इच्छा से भगवान् का ध्यान किया था उनका जन्म गोपवंश मे गोपीका रूप में हुआ था ताकि वह शरीर, मन, प्राण, आत्मा सभी प्रकार से श्री भगवान् से उत्तम प्रेम कर सकें। यही कारण है कि तपस्वी मुनियों का गोपी रूप में ब्रज में जन्म हुआ था । श्री भगवान् ने गीता में भी यही कहा है कि :

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।।८.६।।

जिस प्रकार के सङ्कल्प को लेकर जीव शरीर को छोड़ता है उसी प्रकार आगे का जन्म जीव को प्राप्त होता है। इसी प्रकार से पद्मपुराण के पातालखण्ड के इकतालीसवें अध्याय में गोपी बनने वाले अन्य मुनियों का भी वृत्तान्त दिया हुआ है। सत्यतपा नामक मुनि ने इस प्रकार तप और ध्यान किया था जिसके फल से दशकल्प के बाद वे सुभद्र नामक गोप की कन्या भद्रा नामक गोपी बने । हरिधामा नामक एक मुनि थे जिन्होंने

उग्र तपस्या की और उसी प्रकार ध्यान जप किया था, वे तीन कल्प के अन्त में सारङ्ग नामक गोप को कन्या रहदैनी नामक गोपी वने। जावालि नामक एक मुनि थे - उन्होंने नौ कल्प तक तपस्या और ध्यान करके प्रचण्ड नामक गोप की कन्या चित्रगन्धा नाम से ब्रज में जन्मग्रहण किया था।

इस प्रकार से अनेक मुनियों ने पूर्वतपस्या और संङ्कल्प के अनुसार श्री भगवान् के साथ सर्वथा प्रेम लाभ के लिये ब्रज मे गोपी रूप लेकर जन्मलाभ किया था। इस प्रकार उच्च संस्कार होने के कारण ही गोपियां इस प्रकार से गोविन्द में अपने प्राण को लगाने वाली हो गई थीं और श्री भगवान् की पूर्णावतार लीला में उपासना, प्रेम और श्रृंगार भाव के मधुर विकास का सौभाग्य प्राप्त किया था।

मुनियों के अतिरिक कुछ गोपियां श्रुतियां भी थी ऐसा प्रमाण भी पद्म पुराण में मिलता है। गोपियों के रूप धारण करने वाली श्रुतियों के नाम थे - उद्गीता, सुगीता, कलगीता, कलसुरा, कलकण्ठिका, बिपञ्ची, क्रमपदा, बहुप्ता, बहुप्रयोगा, बहुकला, कलावती और क्रियावती ।

इस प्रकारसे अनेक देवियों, अनेक श्रुतियां, अनेक मुनिगण आदि ने मिलकर अपने अपने पूर्वजन्म के कर्म के अनुसार ब्रज में गोपीरूप धारण किया और अनेक भावों में श्रीकृष्ण भगवान के साथ प्रेम करके अन्त में अनन्त धामको प्राप्त किया था । अतः ब्रजगोपियां साधारण गोपकन्या नहीं थी परंतु उन्नतकोटि की भगवान की उपासक थीं जिन्होंने कृष्णावतार में उपासनामयी लीलाको पूर्ण किया था।

अनुग्रहाय भूतानां मानुषं देहमास्थितः।

भजते तादृशीः क्रीडा याः श्रुत्वा तत्परो भवेत्।।

जीवों पर कृपा करने के लिये ही भगवान अपने सच्चिदानन्दघनस्वरूप को मनुष्य देह के रूप में प्रकट करके वैसी ही लीलाएँ करते हैं, जिन्हें सुनकर मनुष्य उन भगवान के परायण हो जाता है। अतएव भगवान की इस दिव्य भावमयी लीला में तनिक भी संदेह नहीं करना चाहिये।

यत्पादपंकजपरागनिषेवतृप्ता योगप्रभावविधुताखिलकर्मबन्धाः।

स्वैरं चरन्ति मुनयोऽपि न नह्यमाना स्तस्येच्छयाऽऽत्तवपुषः कुत एव बन्धः।।

जिनके चरण कमलों की रज का सेवन करके भक्तजन तृप्त हो जाते हैं, जिनके साथ योग प्राप्त करके उसके प्रभाव से योगीजन अपने सभी बंधन काट डालते हैं और विचारशील ज्ञानीजन जिनके तत्व का विवचार करके तत्वस्वरूप हो जाते हैं तथा समस्त कर्मबन्धनों से मुक्त होकर स्वछंद विचरते हैं, वे ही भगवन अपने भक्तों की इच्छा से अपना चिन्मय श्री विग्रह प्रकट करते हैं ; तब उनमें कर्म बंधन की कल्पना हो ही कैसे सकती है?

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवायः।।

॥ माखन लीला रहस्य॥

क्या भगवन श्रीकृष्ण केवल लौकिक सुख के लिए माखन चुराया करते थे? क्या इस आधार पर उन्हें चोर कहना उचित है ?

भगवान् श्री कृष्णचन्द्र पर और एक दोष लगाया जाता है कि, वे सामान्य चोर की तरह गोपियो के घर से दही और मक्खन चुराते थे। यह भ्रांति भी भगवान् श्रीकृष्ण के स्वरूप को न जानकर ही कही जाती है। श्रीमद भगवत महापुराण में यह स्पष्ट वर्णन है की श्रीभगवान के जन्मोत्सव में नंदबाबा ने वस्त्र और आभूषण से सुसज्जित दो लाख गौवें दान दीं तथा गौदान का अन्य सन्दर्भ भी अनेकों अध्याय में है। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है की नंदबाबा कितनी गौवों के स्वामी थे। यदि दान की राशि को १० % भी मान लिया जाये तब भी लगभग २० लाख गौवों का हिसाब बनता है। २० लाख गौवों से कितना दूध, दही और माखन श्री कृष्ण के अपने घर में उत्पन्न होता होगा इसका अनुमान बुद्धिमान मनुष्य स्वयं ही लगा सकते हैं। और जिसके अपने घर में इतना दूध, दही और माखन उत्पन्न होगा उसे दूसरों के घर में जाकर माखन चोरी की क्या आवश्यकता होगी ?

अब प्रश्न यह हो सकता है कि जब श्रीकृष्णजी के अपने घर में इतना दूध, दही, माखन था तो, दूसरे के घर से माखन लेने की आवश्यकता ही क्या थी ? इसका यह पहला उत्तर यह है की जहाँ गोपियों के घर में श्रीकृष्ण द्वारा माखन चुराने की बात लिखी है, वहां यह भी लिखा है कि, श्रीकृष्णचन्द्र को माखन लेने में किसी गोपी ने कभी मना नही किया, अपितु सभी गोपियां चाहती थी कि श्रीकृष्ण उनके घर आकर माखन का भोग लगाएं। और माखन निकालते तथा दही मन्थन करते समय सब गोपियां भगवान का

गुण गान करती थी एवं मन्थन के बाद वह समस्त दही और माखन इत्यादि भगवान को अर्पण करती थीं। श्री मदभागवत के दशमस्कन्ध में लिखा है :

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेप प्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितो-क्षणमार्जनादौ ।
गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः।।

भगवान में अनुरक्त गोपियां धन्य हैं, जो दूध दोहने के समय और माखन निकालने के समय मंथन के शब्द के साथ साथ अपने प्रेम भरे शब्दों को मिलाती हुई हो भगवान के मधुर गुणों को गातीं थीं। जिनके समस्त कर्म, समस्त प्राण, मन भगवान के प्रेम में ही निमग्न था, जिन्होंने अपना सर्वस्व भगवान के चरणकमलों में अर्पण कर दिया था, उनके लिये भगवान को थोडा सा मक्खन देना क्या बडी बात थी । इसलिये गोपियों के घरसे श्रीकृष्ण द्वारा माखन का भोग चोरी नहीं हो सकता। क्योंकि चोर दूसरे की चीज को उसकी अनिच्छा से चोरी करता है, उसकी इच्छा से नही। इच्छा से लेना चोरी नही कहलाता। दूसरा यह की इस संसार में ऐसे कौन सी वस्तु है जो श्रीभगवान की नहीं है और उसको चोरी करने की आवश्यकता पड़ती है? गोपियों का तो सर्वस्त्र की श्री भगवान् को अर्पित था तब उन्हें माखन चोरी करने की क्या आवश्यकता थी।

उसका उत्तर यह है कि, अपनी माता की वस्तुओं को छोडकर संसार की अन्य वस्तुओं का भोग लगा कर संसार को तृप्त करना भगवान् का लक्ष्य था । शास्त्रोंमें कहा है किः

तस्मिँस्तुष्टे जगतुष्टं प्रीणिते प्रीणितं जगत् ।

जिस विराट् पुरुष के उदर में समस्त ब्रह्माण्ड व्याप्त है, उनके पेट भरने से ब्रह्माण्डकी तृप्ति होती है।

जिस समय दुर्योधनके कहने पर दुर्वासा ऋषि अपने शिष्यों के साथ वनवासी पांडवों के यहां अतिथि के रूप में आय थे, उस समय भी द्रौपदी के घर में केवल एक शाक का पत्ता खाकर जगत की तृप्ति करके श्रीभगवान ने इसी सत्य सिद्धान्त को प्रमाणित किया था। केवल माता यशोदा के घर में मक्खन खाने पर और वहां विशेष आत्मीय सम्बन्ध होने के कारण उससे केवल माता यशोदा का ही कल्याण होता, समस्त संसार का कल्याण नही होता, परन्तु श्रीकृष्ण जी भगवान् के पूर्णावतार थे और इस प्रकार समस्त संसार की तृप्ति के लिए भगवान् अन्य गोपियों के घर में भी माखन का भोग लगाते रहे, अतः श्रीकृष्णचन्द्र जी माता यशोदा के घर प्रचुर दही, माखन होने पर भी गोपियों के द्वारा समर्पित माखन को खाया करते थे। यही माखनलीला का रहस्य है।

परन्तु तब भी उन्हें आध्यात्मिक दृष्टि से चोर कहा भी जा सकता है क्योंकि वे 'चितचोर' तो थे ही।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।

॥ असत्य भाषण रहस्य॥

श्री कृष्ण असत्य का समर्थन करते थे? उन्होंने महाभारत युद्ध में युधिष्ठिर से असत्य कहलवा कर गुरु द्रोणाचार्य का वध करवाया ?

महाभारत लिखा है कि, जिस समय अनेक दिनों के संग्राम के बाद भी पांडव द्रोणाचार्य का वध करने में विफल रहे और उनके भयानक अस्त्र प्रहार से पाण्डव सेना का क्षय होने लगा, उस समय उनको मारनेके लिये यह उपाय देखा गया कि, उनके पुत्र अश्वत्थामा की मृत्यु का समाचार यदि वे सुनेंगें, तो, संग्राम करना छोड़ देंगे और उस दशा में द्रोणाचार्य का वध हो सकेगा । इसी के अनुसार अश्वथामा नामक हाथी के मारे जाने पर द्रोणाचार्य तक यह समाचार पहुँचाया गया की अश्वथामा युद्ध में मारे गये । जब द्रोणाचार्य को विश्वास नहीं हुआ और उन्होने कहा कि, जब तक धर्मराज युधिष्ठिर इस बातको अपने मुख से नही कहेंगे तब तक उनको पूर्ण विश्वास नही होगा । तब श्रीकृष्ण जी ने जाकर युधिष्ठिरसे कहा "आप कह दीजिये कि अश्वत्थामा का वध हो गया है।" धर्मराज युधिष्ठिर सत्यप्रतिज्ञ थे इसलिये उन्होंने असत्य कहना अस्वीकार कर दिया। बहुत समझाने पर तब युधिष्ठिर ने स्वीकार किया कि वह कहेंगे - "अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा' अश्वत्थामा मारे गये हैं, मनुष्य या हाथी। 'कुञ्जर' शब्द के साथ 'अश्वत्थामा हत:' कहना युधिष्ठिर ने स्वीकार किया जिससे उनके शब्द में असत्य बात न होने पावे । परन्तु श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा कि, 'अश्वत्थामा हतः' इतना जोर से कहना और 'नरो वा कुञ्जरो वा' इसको धीरे से कहना, क्योंकि, 'नरो वा कुञ्जरो वा' यदि युधिष्ठिर जोर से कहेंगे तो द्रोणाचार्य को अश्वत्थामा की मृत्यु पर ठीक विश्वास न होगा और विश्वास न होने से वे न तो युद्ध से हटेंगे और न ही उनकी मृत्यु ही होगी । इस प्रकार श्रीकृष्ण के उपदेश से प्रेरित होकर युधिष्ठिरजीने वैसा ही कहा; 'अश्वत्थामा हतः'

इस पूर्वार्द्धको बहुत जोरसे और 'नरो वा कुञ्जरो वा' इसको बहुत धीरे से कह दिया, जिससे द्रोणाचार्य को, अश्वत्थामा की मृत्यु में कुछ भी सन्देह न रहा और पांडव उनका वध कर पाए।

महाभारत में लिखा है कि आजन्म सत्यवादी होने पर भी इस मिथ्या भाषण के कारण युधिष्ठिर को नरक दर्शन करना पड़ा। परन्तु श्रीकृष्ण जिन्होंने असत्य भाषण युधिष्ठिर से कराया था, उनको नरक देखना नही पड़ा और वे सीधे ही अपने धाम को चले गये। अब इसमें विचार करने योग्य यह है कि, जब नीति शास्त्र के अनुसार भी पाप के सिखाने वाले के लिये भी दण्डप्राप्ति की आज्ञा लिखी है तो श्रीकृष्ण को नरकदर्शन क्यो नही हुआ ?

पूर्णावतार की कार्य विधि के विषय में यही सिद्धान्त निश्चय किया गया कि, पूर्णावतार किसी भाव अधीन न होकर जगत कल्याण बुद्धि से काम करते हैं, इसलिये यहाँ पर भी उसी के अनुसार श्रीकृष्णचन्द्र जी की यही विचारधारा थी की द्रोणाचार्य जब अधार्मिक दुर्योधन के पक्ष में हैं, तो उनकी मृत्यु बिना धर्म की जय और संसार को कल्याण होना असम्भव है, इसलिये एक तरफ तो युधिष्ठिर की सत्य प्रतिज्ञा की रक्षा द्वारा व्यक्तिगत धर्म धम्र्सका पालन है और दूसरी ओर पापियों के नाश और समस्त संसार का कल्याण है। इसलिये समष्टि और व्यष्टिगत धर्म के विचार से द्रोणाचार्य का मरण ही उस समय धर्म था और यदि उसके लिये किसी को असत्य भी बोलना पड़े तो असत्य भी धर्म था। पूर्णज्ञानी पूर्णावतार श्रीकृष्ण के हृदय में इस धर्म संकट की मीमांसा दृढमूल थी, इसलिये उनको इस संसार के कल्याण की बुद्धि से किसी से असत्य कहलवाना भी अधर्म नही था, इसके सिवाय स्वाभिमान और स्वार्थशून्य होने के कारण उनके भावातीत स्वरूप के साथ असत्य भाषण का, पुण्य पाप से कोई सम्पर्क नही था,

यही कारण है कि, श्रीकृष्ण जी पर मिथ्या भाषण करानेका कोई पाप न हुआ और वे सीधे अपने धामको चले गये। परन्तु युधिष्ठिर में इस प्रकार की ज्ञानमयी उदार बुद्धि नही थी ।

युधिष्ठिर को भी कभी नरकदर्शन नही करना पड़ता, यदि स्वाभिमान को छोडकर भगवान् श्रीकृष्ण की तरह ज्ञानमय बुद्धि से विचार करते कि, व्यक्तिगत धर्म के साथ समष्टिगत धर्म की तुलनाके तथा उस देश काल में जगत् कल्याण के विचार से झूठ बोलना ही उस समय धर्म है। दूसरा ज्ञान का इतना ऊंचा अधिकार न होने पर भी भक्ति के पक्ष को भी आश्रित लेकर युधिष्ठिर इस प्रकार का विचार करते कि, श्रीकृष्णचन्द्र पूर्णब्रह्म नारायण और परमज्ञानी गुरु हैं, संसार में धर्मरक्षा के लिये इनका अवतार हुआ है, इसलिये मेरा भी यह कर्त्तव्य है किं, जैसी वे आज्ञा करें गुरुबुद्धि से उसको मानते जायें और फलाफल उन्हीमें अर्पण करते जायें । इस प्रकार भक्तिमूलक समर्पण-बुद्धि होने पर भी युधिष्ठिर को नरक नहीं देखना पड़ता ।

इस प्रकारसे उनके जीवन स्तर मे उदार धर्मनीति, पूर्णज्ञान, पूर्णकर्मयोग, भावातीत अलौकिक भाव तथा जगत् कल्याण करने के अनेकों दृष्टान्त मिलते है जो पूर्व वर्णित विज्ञान के अनुसार विचार करनेपर सम्पूर्ण युक्तियुक्त सिद्ध हो जाते हैं ।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ।।

॥ चीरहरण लीला रहस्य॥

अन्य भ्रांतियों की तरह चीरहरण के विषयमें भी जो शंका होती है वह भी इसके रहस्य के न समझ पाने का ही फल हैं। श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध के इक्कीसवें अध्याय में स्पष्ट वर्णन है की भगवान् की रूप माधुरी, वंशीध्वनि, और प्रेममयी लीलाएं देख गोपियां मुग्ध हो गयी थीं। बाइसवें अध्याय में उसी प्रेम की पूर्णता प्राप्त करने के लिए वे साधना में लग गयीं और उनकी यही साधना भगवान् ने पूर्ण की। कुछ गोपियों ने भगवान् श्री कृष्ण को पति रूप से प्राप्त करने लिये कात्यायनी व्रत भी किया और माँ कात्यायनी से वर माँगा:

'नन्दगोपसुतं देवि पतिं में कुरु ते नमः माता कात्यायनि !"

हे माता कात्यायनी ! नन्द नंदन भगवान् श्री कृष्ण को मैं पति रूप में प्राप्त करूँ। मैं आपको नमस्कार करती हूँ ।

जब श्रीकृष्ण साक्षात् परमात्मा थे तो परमात्मा को पाने के लिए उचित योग्यता भी होनी चाहिये उसके बिना श्रीकृष्ण कभी उनके पति नहीं हो सकते थे। उन्होंने वस्त्र-हरण द्वारा उस योग्यता की परीक्षा की शास्त्रों का सिद्धान्त है, कि जब तक मनुष्य अपने शरीर के प्रति अभिमान रखता है तब तक वह परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकता। काम, लज्जा, भय आदि भी तभी तक रहता है, जब तक शरीर के प्रति अभिमान है, बालकों में काम नहीं होता है इसलिये वे नग्न होने शर्म नहीं करते। इसी प्रकार परमहंस महात्मा परमात्मा को पाकर शरीर के अभिमान को काटते हैं इसी कारण वे भी नग्न रहने में कोई लज्जा या संकोच नहीं करते। जब तक मनुष्य अपना सर्वस्व

भगवान् को अर्पित न कर दे तब तक शरीर के प्रति अभिमान रहने के कारण परमात्मा नहीं मिलते हैं।

गोपियाँ क्या चाहती थीं यह तो उनकी साधना से स्पष्ट है। वह चाहती थीं श्री कृष्ण के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण परन्तु उनके समर्पण में कुछ कमी रह गयी थी, वह निर्वाण रूप से श्री कृष्ण के सामने नहीं जा रही थी। उनकी इसी अपूर्णता, उनकी साधना और समर्पण को पूर्ण करने के लिए उनके शारीरिक अभिमान रुपी चीर का आवरण हर लेना उचित था और यही चीरहरण का रहस्य है। भक्त केवल अपनी शक्ति, बल और संकल्प से पूर्ण समर्पण नहीं कर सकता। समपर्ण केवल तभी संभव है जब भगवान् स्वयं उस समर्पण को स्वीकार कर लें।

लौकिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से भी चीरहरण लीला में कोई दोष नहीं था। गोपियाँ श्री कृष्ण को प्राप्त करने के लिए जो साधना कर रही थीं उसके एक त्रुटि थी , वह शास्त्र मर्यादा और परम्परागत सनातन धर्म मर्यादा का उल्लंघन कर विवस्त्र स्नान करती थीं। अज्ञानपूर्ण होने पर भी इसका मार्जन आवश्यक था जोकि भगवान् श्री कृष्ण ने चीरहरण की लीला के द्वारा संपन्न किया तथा गोपियों से इसका प्रायश्चित्त भी करवाया। चीरहरण लीला में भगवान् श्री कृष्ण का वचन है:

न मय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते ।

भर्जिता क्वथिता धाना प्रायो बीजाय नेशते ॥

जिन्होंने अपना मन और प्राण मुझे समर्पित कर दिया है उनकी कामनाएं उन्हें सांसारिक भोगों की ओर ले जाने में समर्थ नहीं होती। ठीक वैसे ही जैसे भुने या उबले हुए बीज पुनः अंकुरित हो कर नहीं उग पाते।

जो मनुष्य भगवान् के नाम पर धर्म द्वारा स्थापित विधि का उल्लंघन करते हैं उन्हें इस प्रसंग से शिक्षा लेनी चाहिए की भगवान् त्रुटि का मार्जन भी करते हैं तथा उसका उचित प्रायश्चित्त भी करवाते हैं।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ।।

॥ बहुविवाह रहस्य॥

क्या श्री कृष्ण द्वारा १६ हज़ार १०० कन्याओं के साथ विवाह करना उचित था ?

अवतारलीला में भगवान श्रीकृष्ण ने सहस्र कन्याओ के साथ पाणिग्रहण किया परन्तु उन सभी विवाहों का मूल खोजने पर यह पता लगेगा कि, उन्होंने अपनी किसी लौकिक इच्छा को चरितार्थ करनेके अभिप्राय से लौकिक जनों की तरह कोई भी विवाह नहीं किया था। उनके सभी विवाह पतिभाव में तपस्यापरायण स्त्रियों को तपःफल प्रदान के अर्थ से ही हुए थे। जिस प्रकार 'श्रीभगवान् जैसे मेरे पुत्र हो, इस कामना को लेकर तपस्या करने के कारण श्री भगवान को वसुदेव देवकी का पुत्र बनना पड़ा था, जिस प्रकार, "श्रीभगवान से शरीर, मन, प्राण द्वारा प्रेम प्राप्त हो" इस भाव से तपस्यापरायण मुनियों को और श्रुतियों को गोपीरूप से जन्मदान करके उनसे प्रेम करना पड़ा, ठीक उसी प्रकार रुक्मिणी, आदि अनेक स्त्रियों को जिन्होंने "श्रीभगवान् मेरे पति हो जाय" की कामना से तपस्या की थी, केवल उनको तपः फल देने के लिये ही कृष्णावतार मे श्रीभगवान् ने पत्नी रूप में ग्रहण किया। उसमे अपनी तरफ से कामना कारण नहीं थी, क्योकि आत्माराम, भावातीत भगवान में कामना हो ही क्य सकती है, केवल भक्तों की ही कामना इन सब विवाह में कारणस्वरूप थी और यही भगवान् श्री कृष्ण के १६ हज़ार १०० कन्याओं को ग्रहण करने का कारण था । श्रीमदभगवत महापुराण के दशम स्कंद अध्याय ५९ में लिखा है :

तं प्रविष्टं स्त्रियो वीक्ष्य नरवर्यं विमोहिताः ।

मनसा वव्रिरेऽभीष्टं पतिं दैवोपसादितम् ॥ ३४ ॥

भूयात् पतिरयं मह्यं धाता तदनुमोदताम् ।

इति सर्वाः पृथक् कृष्णे भावेन हृदयं दधुः ॥ ३५ ॥

ताः प्राहिणोद् द्वारवतीं सुमृष्टविरजोऽम्बराः ।

जब उन राजकुमारियों ने अंत:पुर में पधारे हुए नरश्रेष्ठ भगवान् श्री कृष्ण को देखा तब वह मोहित हो गयीं और उन्होंने अहैतु की कृपा तथा अपना सौभाग्य समझ कर मन ही मन भगवान् को अपने प्रिय प्रियतम के रूप में वरन कर लिया। उन राजकुमारियों में से प्रत्येक ने अलग अलग यही निश्चय की भगवान् श्री कृष्ण ही मेरे पति हों और परमात्मा मेरी इस अभिलाषा को अवश्य पूर्ण करें। इस प्रकार उन्होंने प्रेम भाव से अपना हृदय भगवान के प्रति न्योछावर कर दिया।

अथो मुहूर्त एकस्मिन् नानागारेषु ताः स्त्रियः ।

यथोपयेमे भगवान् तावद् रूपधरोऽव्ययः ॥ ४२ ॥

तदन्तर भगवान् श्री कृष्ण ने एक ही मुहूर्त में अलग अलग भवनों में अलग अलग रूप धारण करके एक ही साथ सब राजकुमारियों के साथ पाणिग्रहण किया।

उपरोक्त से स्पष्ट है की केवल भक्त का मनोरथ पूर्ण करने के लिए ही श्री भगवान् के १६ हज़ार १०० कन्याओं के साथ के वाल एक ही मुहूर्त में अलग अलग भवनों में बहुरूप में उनके से साथ विवाह किया। और केवल भक्त की मनोरथ पूर्ति ही लक्ष्य होने के कारण उन सब स्त्रियों को अवतारलीला के समाप्त होते समय देशवासियों को कलियुग के प्रभाव से देशद्रोही और प्रमादी जानकर उहोंने ब्रह्मशाप के छल से स्वयं ही मरवा दिया था और स्वयं भी अपने धाम को सिधार गये । यही उनके जीवन में कर्म और ज्ञान का अपूर्व सामजस्य है।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।

॥ विभिन्न श्री कृष्ण रहस्य॥

क्या महाभारत में वर्णित श्री कृष्ण और पुराणों में वर्णित श्री कृष्ण अलग हैं ?

कुछ महात्मा यह मानते हैं की महाभारत में वर्णित श्री कृष्ण और श्रीमदभगवत में वर्णित श्री कृष्ण अलग हैं क्योंकि उनके अनुसार सम्पूर्ण महाभारत में श्रीकृष्ण के चरित्र में कोई दोष नहीं मिलता और उनमें श्रेष्ठ पुरुष के समस्त गुण विद्यमान हैं और श्रीमदभागवत पुराण, विष्णु पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णित श्रीकृष्ण में चरित्र ही समस्त भ्रांतियों की जनक है। परन्तु इसके प्रमाण रूप में वह शास्त्रों में वर्णित एक किसी भी श्लोक या उदाहरण नहीं दे पाते जिससे यह प्रमाणित हो सके की महाभारत में वर्णित श्री कृष्ण और पुराणों में वर्णित श्री कृष्ण अलग हैं। समकालीन तथ्यों पर आधारित थोथे विचार भी भ्रांतियों का प्रचार करने में सहायक हैं।

वृन्दावनकी समस्त लीला और महाभारत की समस्त लीला एक ही श्रीकृष्ण द्वारा सम्पन्न हुई थी, इस विषय का प्रमाण द्रोणभागवत के श्रीकृष्ण पर्व में सञ्जय के प्रति धृतराष्ट्र की उक्तिमे मिलता है, यथा--

शृणु दिव्यानि कर्माणि वासुदेवस्य सञ्जय। कृतवान् यानि गोविन्द यथा नान्यः पुमान् कचित् ॥

गोकुले वर्द्धमानेन बालेनैव महात्मना। विख्यापित बलं बाह्वोस्त्रिषु लोकेषु सञ्जय ॥

उच्चैःश्रवस्तुल्यवलं वायुवेग समं जचे। जघान हयराजं तं यमुनावनवासिनम् ॥

दानवे घोरकर्माणं गवां मृत्युमिवोत्थितम्। वृषरूपधरं वाल्ये भुजाभ्यां निजघान ह ॥

प्रलम्बं नरकं जम्भे पीठञ्चापि महासुरम्। मुरञ्चामरसङ्काशमवधीत् पुष्करेक्षणः ॥

तथा कंसो महातेजा जरासन्धेन पालितः। विक्रमेणैव कृष्णेन सगणः पातितो रणे ॥

सुनामा नरविक्रान्तः समग्राक्षौहिणीपतिः। भोजराजविमध्यस्थो भ्राता कंसस्य वीर्यवान् ॥

बलदेवद्वितीयेन कृष्णेनामित्रघातिना। तपस्वी समरे दग्धः ससैन्यः शूरसेनराट ॥

चेदिराजश्च विक्रान्तं राजसेनापतिं बली। अध्ये विवदमानञ्च जघान पशुवत् तदा ॥

यच्च तन्महदाश्चर्यं सभायां मम सञ्जय। कृतवान् पुण्डरीकाक्षः कस्तदन्य इहार्हति ॥

यमाहुः सर्वपितरं वासुदेवं द्विजातयः। अपि वा ह्येष पाण्डुनां योत्स्यतेर्थाय सञ्जय ॥

स यदा तात संनह्येत पाण्डवार्थाय सञ्जय। न तदा प्रतिसंयोद्धा भविता तस्य कश्चन ॥

यदि स्म कुरवः सर्वे जयेयुनार्म पाण्डवान्। वार्षणेयोऽथार्य तेषां वै गृहीयाच्छस्त्रमुत्तमम् ॥

ततः सर्वानरव्याघो हत्वा नरपतीन् रणे। कौरवांश्च महाबाहुः कुन्त्यै दद्यात् स मेदिनीम् ॥

यस्य यन्ता हृषीकेशो योद्धा यस्य धनञ्जयः। रथस्य तस्य कः संख्ये प्रत्यनीको भवेद्रथः ॥

मोहाद्दुर्योधनः कृष्ण यो न वेत्तीह केशवम्। मोहितो दैवयोगेन मृत्युपाशपुरस्कृतः ॥

न वेद कृष्णं दाशार्हगर्जनञ्चैव पाण्डवम्। पूर्वदेवौ महात्मानौ नरनारायणावुभौ ॥

भगवान् वासुदेव श्रीकृष्ण के दिव्य कर्मों को सुनो, जिनके जैसे कर्म कोई नहीं कर सकता है। बाल्यावस्था में जब श्रीकृष्ण गोकुल में थे उस समय उनकी अलौकिक शक्ति ब्रजगोपिकाओं में तथा संसार में प्रकट हुई थी। इन्होंने यमुना वनवासी अति वेगवान् शक्तिमान हथासुर को मार दिया था । गौओं के शत्रु बैल के रूप धारण करने वाले दानव को भी मार दिया था । प्रलम्व, नरक, जम्भ, पीठ और मुर नामक असुरों को निहत किया था । महाबल कंसराज को अपने गणों के साथ निहत किया था ।

अक्षौहिणी सेनाओं के अधिपति कंस भ्राता सुनामा को बलराम को साथ लेकर श्रीकृष्णजी ने मार दिया था। उन्होंने चेदिराज शिशुपाल को युधिष्ठिर के यज्ञमें अर्च्य सम्बन्धीय विवाद में पशु की तरह मार दिया था । मेरी ही सभामें उन्होंने जो आश्चर्यजनक कार्य किया था ऐसा कौन कर सकता है ! जिनको द्विजगण परमपिता कहते हैं, अब वे ही श्रीकृष्ण पाण्डवों के पक्ष में होकर युद्ध करेंगे । उनके पाण्डवपक्ष में युद्ध करने पर कौन उनसे युद्ध कर सकता है | यदि कौरवगण पाण्डवों को पराजित भी कर दें, तब भी, श्रीकृष्ण जब अस्त्रग्रहण करेगें तो सबको मार कर पांडवों को पृथिवी का राज्य दिलवा देंगे । जहाँ पर श्रीकृष्ण सारथि और अर्जुन योद्धा हैं वहां कौन उनके सामने युद्ध कर सकता है ? दैवविमूढ़ दुर्योधन श्रीकृष्ण के स्वरूप को जान न सका, उसका नाश सन्निकट है । वे दोनों नर नारायण ऋषि थे, अब उन्हीं के अवतार रूप से आयें हैं।

अतः यह बात स्पष्ट हुई कि वृन्दावन लीला करने वाले तथा महाभारत की लीला करनेवाले श्रीकृष्ण एक ही परमपुरुष परमात्मा थे ।

प्रश्न यह भी हो सकता है की एक ही श्रीकृष्ण के जीवनमें इस प्रकार विविध भावों से भरी हुई लीलाएँ कैसे संघटित हो सकती हैं?

अवतार जब सच्चिदानंदमय श्रीभगवान के सत्, चित्, आनन्दरूपी तीन भावों को लेकर प्रकट होता है तो पूर्णावतार में इन तीनों भावों का पूर्ण विकास रहेगा इसमें सन्देह नहीं है । इसी कारण, पूर्णावतार के जीवन में कार्य ब्रह्म के अंदर सद्भाव के अनुसार कर्म की पूर्णलीला, चित् भाव के अनुसार ज्ञान की पूर्णलीला और आनन्दभाव के अनुसार उपासना तथा उसकी पूर्ण लीला प्रकट होगी । यही कारण है कि, पूर्णावतार श्रीकृष्ण

के लीलाकाल में कार्यब्रह्म के भीतर नाना प्रकार के अनन्त विचित्र कर्म संघटित हुए थे, उपासनाभाव के अन्तर्गत मुख्यरस और गौणरस रूप से जो चतुर्दश प्रकार के रसका वर्णन पाया जाता है। सभी साधक भक्त उनके लीलाकाल में प्रकट हुए थे और अनन्त ज्ञानसमुद्र के जितने तरङ्ग हो सकते हैं, सभी के प्रभाव उनके विचार तथा कार्य समूह में प्रकट हुए थे, यही अनन्त विस्तारमयी कर्मोपासना और ज्ञानसम्बन्धी उनकी पूर्णावतारलीला का रहस्य है।

अतः शास्त्रों को समझने वाले मनुष्य को इस प्रकार के सन्देह जाल में नहीं फंसना चाहिये।

।।ॐ नमों भगवते वासुदेवाय:।।

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।